

## हमारे पूर्वज

भार्गव इतिहास में भार्गव वंश के आदि प्रवर्तक महर्षि भृगु के काल से लेकर सन् 1773 के अन्त तक का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है। ऋग्वेद तथा परवर्ती वैदिक साहित्य से स्पष्ट ज्ञात होता है कि आर्यों में जाति पांति का बन्धन नहीं था। वे सब अपने को एक ही जाति का मानते थे। परन्तु जिस प्रकार इंग्लैंड आदि पश्चिमी देशों में जन समुदाय तीन वर्गों में विभक्त माना जाता है उसी प्रकार वैदिक काल में भी आर्यों में तीन वर्ग थे। यज्ञ हवन करने कराने वाले ब्राह्मण कहलाते थे, जिन में मंत्रों के रचयिता ऋषि पद प्राप्त करते थे। राजा और उसके भाई बेटे क्षत्रिय कहलाते थे। शेष सब आर्य विश्व कहलाते थे जिसका अर्थ साधारण जन है। क्या ग्राम का मुखिया और क्या किसान, क्या सैनिक और क्या ग्वाला, क्या बढ़ई और क्या जुलाहा सब इसी विश्व वर्ग में माने जाते थे। ब्राह्मणों के आज जितने गोत्र पाये जाते हैं वे सब वैदिक काल के सात मूल वंशों की ही शाखा-प्रशाखा हैं। ये सात वंश भार्गव, आंगिरस, आत्रेय, काश्यप, वसिष्ठ, आगस्त्य और कौशिक हैं। इनमें सबसे प्राचीन भार्गव, आत्रेय और काश्यप हैं जिनके प्रवर्तक भृगु, अत्रि और काश्यप नामक ऋषि थे, जो वैदिक युग के आरम्भ में हुए थे, और वैवस्वत मनु के समकालीन थे। महर्षि भृगु अग्नि क्रिया के प्रवर्तक होने के कारण अथर्वन् और अंगिरस् भी कहलाते थे। इसीलिए इनके वंशज प्रारंभ में भार्गव और आंगिरस दोनों नामों से प्रसिद्ध थे। परन्तु कुछ समय बाद भृगुवंश की एक शाखा ने आंगिरस नाम से एक स्वतंत्र वंश का रूप धारण कर लिया अतः शेष भार्गवों ने अपने को आंगिरस कहना बन्द कर दिया। इस प्रकार आंगिरस वंश का चौथे ब्राह्मण वंश के रूप में उदय हुआ। कुछ शताब्दियों बाद वसिष्ठ नामक एक ऋषि ने वसिष्ठ वंश का प्रवर्तन किया। वसिष्ठ के ही भाई अगस्त्य ने आगस्त्य वंश का प्रवर्तन किया। इन्हीं दोनों के समकालीन विश्वामित्र थे जो पहले राजपुत्र थे। उन्होंने ब्राह्मण बनकर एक नये वंश का प्रवर्तन किया जो उनके पितामह कुशिक के नाम पर कौशिक कहलाया। ये सातों वंश बाह्य विवाही थे अर्थात् किसी भी एक वंश का पुरुष उसी वंश की कन्या से विवाह नहीं कर सकता था। कालान्तर में भार्गवों और आंगिरसों की संख्या में वृद्धि होने के कारण वे दोनों वंश दो दो गणों में विभक्त हो गये। बाद में इन दोनों वंशों में से प्रत्येक में कुछ क्षत्रिय सम्मिलित हो गये। भार्गवों में समय समय पर चार क्षत्रिय सम्मिलित हुए और आंगिरसों में पांच क्षत्रिय सम्मिलित हुए। अतः भार्गवों में छः गण और आंगिरसों में सात गण हो गये। शेष पांच वंश भी बाद में गण कहलाने लगे। इस प्रकार ब्राह्मणों में अट्ठारह गण हो गये। प्रत्येक गण बाह्य विवाही हो गया अर्थात् एक गण का व्यक्ति अपने से भिन्न गण में ही विवाह कर सकता था। भृगु वंशावली में सर्वप्रथम नाम भृगु का आता है, जो ब्रह्मा के मानस पुत्र थे। इनके वंशजों में भृगु वारूणि हुए जिनके दो पुत्र च्यवन तथा कवि थे। इन्हीं दोनों से भार्गव वंश का प्रवर्तन हुआ। भार्गव वंश प्रारम्भ में जिन दो गणों में विभक्त हुआ उनमें से एक गण च्यवन के वंशज अप्रवान के नाम पर आप्रवान कहलाया और दूसरा उन्हीं के वंशज शुनक के नाम पर शौनक कहलाया। भार्गवों के क्षत्रिय मूल के गणों में सबसे प्राचीन वह गण है जिसका नाम वैन्य अथवा पाथ्य है। वैदिक काल की प्रारम्भिक शताब्दियों में पृथु नामक एक अत्यन्त प्रसिद्ध राजा हुआ था जिसके पिता का नाम वेन था। इस राजा का कोई वंशज पुरोहित बनकर भार्गवों में सम्मिलित हो गया और उसके वंशजों का एक पृथक् गण हो गया जो वैन्य अथवा पाथ्य कहलाने लगा।

दूसरा क्षत्रिय जो भार्गव वंश में सम्मिलित हुआ वह राजा दिवोदास का पुत्र मित्रयु था। मित्रयु के वंशज मैत्रेय कहलाये और उनसे मैत्रेय गण का प्रवर्तन हुआ। भार्गवों का तीसरा क्षत्रिय मूल का गण वैतहव्य अथवा यास्क कहलाता था। यास्क के द्वारा ही भार्गव वंश अलंकृत हुआ। इन्होंने निरुक्त नामक ग्रन्थ की रचना की। परशुराम के शत्रु सहस्रबाहु के प्रपौत्र का नाम वीतहव्य था। उसका कोई वंशज पुरोहित बनकर भार्गवों में सम्मिलित हो गया और उसके वंशज वैतहव्य अथवा यास्क कहलाने लगे। भार्गवों का

चौथा क्षत्रिय मूल का गण वेदविश्वज्योति कहलाता है। इसका इतिहास ज्ञात नहीं है। इस प्रकार भार्गवों में छः गण हो गये। गण वहिविवाही वर्ग को कहते हैं, अर्थात् एक गण के व्यक्ति आपस में विवाह नहीं कर सकते थे। भृगु की अड़तीसवीं पीढ़ी में गृत्समद का नाम आता है। गृत्समद प्रसिद्ध राजा दिबोदास के समकालीन थे। वे एक विख्यात ऋषि थे और ऋग्वेद के द्वितीय मंडल के सूक्त उन्हीं के रचे हुए हैं। गृत्समद के पुत्र का नाम कूर्म था और उन्हीं के परिवार के एक ऋषि का नाम सोमाहुति था। च्यवन बड़े प्रसिद्ध ऋषि थे। उनका विवाह राजा शयीति की पुत्री सुकन्या से हुआ। इनके च्यवान तथा वसन दो पुत्र थे। च्यवान के सुमेधा नामक पुत्री और अप्रवान् तथा प्रमाति नामक पुत्र हुए। सुमेधा का विवाह महर्षि कश्यप के पौत्र निधुप से हुआ। अप्रवान का विवाह राजा नहुष की पुत्री और ययाति की बहिन रुचि से हुआ। अप्रवान और प्रमाति से भृगुवंश आगे बढ़ा। प्रमाति के वंश में रूरू नामक ऋषि हुए। रूरू के वंशज शुनक ने आंगिरस वंश के शौन होत्र गोत्री गृत्समद को गोद ले लिया जिसके फलस्वरूप गृत्समद शौनक हो गये और उनसे शौनक गण प्रवर्तित हुआ। अप्रवान के वंश में ऊर्व नायक प्रसिद्ध ऋषि हुए। ऊर्व के पुत्र का नाम ऋचीक था। ऋचीक का कान्य-कुब्ज राजा गाधि की पुत्री, महर्षि विश्वामित्र की बहन, सत्यवती से विवाह हुआ। ऋचीक और सत्यवती के पुत्र महर्षि जमदग्नि थे। जमदग्नि विश्वामित्र के भानजे थे, और ऋग्वेद में कुछ सूक्तों की रचना दोनों ने मिलकर की थी। भार्गवों के इन छः गणों में आप्रवान गण के सदस्यों की संख्या सबसे अधिक थी। अतः आप्रवान गण तीन पक्षों में विभाजित हो गया जिनके नाम वत्स, बिद और आर्षिषेण थे। अन्य गण भी पक्ष कहलाने लगे। इस प्रकार भार्गवों में आठ पक्ष हो गये। प्रत्येक पक्ष भी अनेक गोत्रों में विभाजित हो गया। कभी-कभी भिन्न भिन्न पक्षों, गणों अथवा वंशों में समान नाम के गोत्र भी मिल जाते थे। उदाहरण के लिए गाग्र्य गोत्र भार्गवों और आंगिरसों दोनों में पाया जाता है। ऐसी दशा में यह निश्चय करना कठिन हो जाता था कि इस प्रकार के गोत्र वाला मनुष्य किस वंश अथवा किस गण का सदस्य है। इस उलझन को दूर करने के लिए प्रत्येक गोत्र के साथ प्रवरों की व्यवस्था की गई। प्रवर का अर्थ श्रेष्ठ होता है। जब किसी गोत्र का व्यक्ति अपने प्रवरों अर्थात् श्रेष्ठ पूर्वजों के नामों का भी उल्लेख कर देता है तो कोई उलझन नहीं हो सकती। भार्गवों के आठ पक्षों के प्रवर इस प्रकार हैं। वत्स पक्ष के प्रवर भृगु, च्यवन, अप्रवान, ऊर्व और जगदग्नि हैं। विद पक्ष के प्रवर भृगु, च्यवन, अप्रवान, ऊर्व और बिद हैं। आर्षिषेण पक्ष के प्रवर भृगु, च्यवन, अप्रवान आर्षिषेण और अनूप हैं। शौनक पक्ष के प्रवर भृगु, शुनहोत्र और गृत्समद हैं। वैश्य पक्ष के प्रवर भृगु, वेन और पृथु हैं। मैत्रेय पक्ष के प्रवर भृगु, वध्यश्व और दिवोदास हैं। यास्क पक्ष के प्रवर भृगु, वीतहव्य और सावेतस हैं। वेदविश्वज्योति पक्ष के प्रवर भृगु, वेद और विश्व ज्योति हैं। जमदग्नि का विवाह इक्ष्वाकु वंश की राजकुमारी रेणुका से हुआ। जमदग्नि और रेणुका के महातेजस्वी राम नामक पुत्र हुए जो शत्रुओं के विरुद्ध परशुधारण करने के कारण परशुराम नाम से विख्यात हुए। परशुराम एक महान ऋषि थे, और महान योद्धा भी। इनका उल्लेख सभी पौराणिक पुस्तकों में मिलता है- (रामायण और महाभारत) में भी। उन्होंने जहां सहस्रबाहु को पराजित करके अपनी वीरता का परिचय दिया वहीं ऋग्वेद के दशम मंडल के 110 वें सूक्त की रचना करके अपनी विद्वता का परिचय दिया। इन्हीं असामान्य गुणों से प्रभावित होकर बाद की पीढ़ियों ने उन्हें साक्षात् भगवान विष्णु का अवतार मान लिया। हम भार्गवों के वर्तमान गोत्र दो गणों में से निकले हैं। बत्स (वछलश), कुत्स (कुछलश), गालव (गोलश) और विद (विदलश) तो अप्रवान गण के अन्तर्गत है। शेष दो अर्थात् काश्यपि (काशिप) और गाग्र्य (गागलश) यास्क गण के अन्तर्गत हैं। इस काल के प्रारम्भ में वेदव्यास के शिष्य वेशम्पायन नामक प्रसिद्ध भार्गव विद्वान हुए जो यजुर्वेद के आचार्य थे और जिन्होंने राजा जनमेजय को महाभारत की कथा सुनाई थी। दूसरे भार्गव विद्वान शौनक थे, जिनका नाम अथर्ववेद की एक शाखा से जुड़ा हुआ है। शौनक ने ऋग्वेद प्रातिशाख्य, अनुक्रमणी और बृहददेवता की भी रचना की थी। इस काल के कई प्रसिद्ध भार्गवों ने (1000 ई0पू0-500 ई0पू0 वैदिक साहित्य के सम्पादन और वेदांग साहित्य की रचना में अतुलित योगदान दिया। इसी युग में भृगुवंश में तीन ऐसी विभूतियां हुई जिन्होंने संस्कृत साहित्य के तीन भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में ऐसे ग्रन्थ रचे जो विश्व के साहित्य में बहुत ऊंचा स्थान रखते हैं। इनमें सर्वप्रथम वाल्मीकि है। रामायण, महाभारत, मत्स्य पुराण, पद्म पुराण और विष्णु पुराण जैसे- प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार वाल्मीकि भृगुवंशी थे। इन ग्रन्थों की पुष्टि ईसा की प्रथम

शताब्दी के बौद्ध कवि अश्वघोष ने अपने बुद्धचरित में यह कह कर की है कि जो काव्य-रचना च्यवन न कर सके वह उनके वंशज वाल्मीकि ने कर दिखाया। इस युग की दूसरी विभूति जिससे भार्गव वंश अलंकृत हुआ, यास्क थे। यास्क ने निरुक्त नामक ग्रन्थ की रचना करके विश्व में पहली बार शब्दव्युत्पत्ति अथवा (Etymolog) पर प्रकाश डाला। इस काल की तीसरी विभूति जिससे भार्गव वंश गौरवान्वित हुआ पाणिनि थे। पाणिनि ने संस्कृत व्याकरण पर अपनी अद्भुत पुस्तक अष्टाध्यायी की रचना की। चौथी शताब्दी ई.पू. के उत्तरार्ध में भारतीय इतिहास का सबसे शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित हुआ जिसका संस्थापक महाबली चन्द्रगुप्त मौर्य थे। चन्द्रगुप्त मौर्य के गुरु और मौर्य साम्राज्य के प्रधानमंत्री और संचालक विष्णुगुप्त चाणक्य नामक महान राजनीतिज्ञ थे, जो कौटिल्य गोत्र के भार्गव थे। चाणक्य ने अर्थशास्त्र नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ रचा जो संस्कृत के राजनीति शास्त्र विषयक ग्रन्थों में सर्वोच्च स्थान रखता है। इसी समय में रचित कामसूत्र के लेखक वात्स्यायन भी भार्गव थे। मौर्य युग के बाद दूसरी शताब्दी ई.पू. में शुंग-युग की ही रचना है। मनुस्मृति से ज्ञात होता है कि उसके रचयिता भी एक भार्गव थे। स्मृत की सभा के सातवीं शताब्दी में सम्राट हर्षवर्धन रत्न और संके प्रसिद्ध गद्य काव्य प्रणेता बाण-वत्स गोत्र के भार्गव थे। इन्होंने दो प्रसिद्ध गद्य काव्य लिखे कादम्बरी और हर्षचरित। प्राचीन काल के अन्तिम प्रसिद्ध भार्गव जिन्होंने लड़खड़ाते हुए वैदिक धर्म का पुनरुद्धार किया और अद्वैत-वेदान्त दर्शन का प्रवर्तन किया 788 ई. में केरल में उत्पन्न हुए। 32 वर्ष की आयु में अपनी रचनाओं से सारे विश्व को चमत्कृत कर दिया। ये महात्मा शंकराचार्य थे। उनके उपनिषदों, ब्रह्म सूत्र और भगवद्गीता पर रचे काव्य उनकी विद्वता के पुष्ट प्रमाण हैं। भरत खंड में महर्षि भृगु ने तपस्या की थी उस स्थल को भृगु क्षेत्र कहते हैं, यही अपभ्रंशित होकर भड़ौच हो गया। इसमें निवास करने वाली सभी जातियां भार्गव कहलाती हैं। महर्षि भृगु से जो वंश बढ़ा वह भार्गव कहलाया। और जो उससे अलग थे, वे भार्गव क्षत्रिय : भार्गव वैश्य आदि कहलाए। महर्षि भृगु ने अपनी श्री नाम की कन्या का पाणिग्रहण श्री विष्णु भगवान से किया था। उस समय ब्रह्मा जी के सभी पुत्र, ऋषि एवं ब्राह्मण उपस्थित हुए। विवाहोपरान्त श्रीजी ने भगवान विष्णु से कहा- इस क्षेत्र में 12000 ब्राह्मण हैं, जो ब्रह्मपद की कामना करते हैं, इन्हें मैं स्थापित करूंगी और 36,000 वैश्यों को भी स्थापित करूंगी। और जो भी इतर जन होंगे वे भी भृगु क्षेत्र में निवास करेंगे उन सबकी अपने-अपने वर्णों में भार्गव संज्ञा होगी। भगवान विष्णु ने एवमस्तु कहा। फलस्वरूप सभी वर्ण अपने नाम के आगे भार्गव लगाने लगे। आज भी भार्गव बड़ई, भार्गव सुनार, भार्गव क्षत्रिय तथा भार्गव वैश्य पाये जाते हैं जिनके गोत्र भिन्न हैं। इस प्रकार भारतवर्ष में भृगुवंशी भार्गव, च्यवन वंशी भार्गव, और्विंशी भार्गव, वत्सवंशी भार्गव, विदवंशी भार्गव, निवास करते हैं। ये सभी भृगुजी की वंशावली में से भार्गव है। उत्तरीय भारत में च्यवनवंशी भार्गव है। गुजरात में भार्गव जाति के चार केन्द्र हैं, भड़ौच, भाडंवी, कमलज और सूरत। भिन्न-भिन्न क्षेत्र के भार्गव भिन्न-भिन्न नामों से जाने जाते हैं, जो इस प्रकार हैं- मध्यप्रदेशीय भार्गव- इनके गोत्र संकृत, कश्यप, अत्रि कौशल्य, कौशिक पूरण, उपमन्यु, वत्स, वशिष्ठ आदि हैं। प्रवरों में आंगिरस, कश्यप, वशिष्ठ, वत्स, गार्गायन, आप्रवान, च्यवन, शंडिल्य, गौतम, गर्ग आदि हैं। वंशों के नामों में व्यास, आजारज, ठाकुर, चौबे, दुबे ज्योतिषी, सहरिया, तिवारी, दीक्षित, मिश्र, पाठक, पुरोहित आदि हैं। गुजराती भार्गव में कुछ लोग अपने नाम के अंत में भार्गव लिखते हैं। कुछ मुंशी, जोआकर, रावल, देसाई, जोशी, व्यास, अजारज, पाठक, ठाकुर, हीडिया, ठाकोर, चोकसी, थानकी, वीण, पटेल, सगोत, याज्ञिक, दीक्षित, शुक्ल, आसलोट आदि। सुप्रसिद्ध श्री के.एम. मुंशी इन्हीं में से एक हैं। इनकी एक मासिक पत्रिका भृगु-तेज भी निकलती थी। दक्षिण में भार्गवन- (बंगलौर में भार्गवन रहते हैं, वह भी भृगुवंशी है। नम्बूदरीपाद जाति (केरल में) भी कदाचित् भृगुवंशी है। वैदिक और संस्कृत साहित्य से स्पष्ट प्रकट होता है, कि प्राचीन काल में समस्त भारतवर्ष के ब्राह्मण एक ही जाति में सिमलित थे, और अपने गोत्रों (अति प्राचीनकाल में भार्गव आंगिरस आदि सात मूल गोत्र और पश्चात् काल में जामदगन्य शौनक आदि 18 गढ़ आर्षप्रवरो और सपिडों को छोड़कर अन्य सब के साथ विवाह कर लेते थे। ईसा के 11वीं शताब्दी तक के जो शिलालेख और ताम्र पत्र हैं उनमें ब्राह्मणों का वर्णन केवल उनके गोत्रों, प्रवरों तथा चरणों (वैदिक शाखाओं) द्वारा ही हुआ है। 12वीं शताब्दी के लेखों में ब्राह्मणों के अवांतर भेदों का वर्णन आरम्भ हो जाता है। इनमें से प्राचीन ब्रह्म-ऋषि देश के अर्थात् प्राचीन कौरव, उत्तर पांचाल, मत्स्य और शौरसेनक जनपदों के ब्राह्मण गौड़ कहलाए। तीसरी, चौथी शताब्दी ई.पू. में कुरुक्षेत्र के आस-पास के देशों में गुड-वंशी अर्थात् गौड़-गोत्री राजपूतों का राज्य था। कुरुक्षेत्र को अपना केन्द्र मानने वाले प्रान्त के ब्राह्मण गौड़ और उनके नाम से समस्त उत्तर-भारत के ब्राह्मण पंचगौड़ कहलाए। पुराणों में से ऐतिहासिक विषय के संग्रह कर्ता और भारतवर्ष की ऐतिहासिक

कथाओं के संशोधक मिपारजिस्टर वंशावली शुद्ध नहीं है, संथतवार व बताकर पीढ़ियों वार रखी गई है, मनु के काल से आरम्भ होकर महाभारत युद्ध के पश्चात् समाप्त होती है, उसके मतानुसार निम्नलिखित विख्यात पुरुष उनके आगे लिखी पीढ़ियों में भृगु वंश में जन्मे थे। (1) च्यवन दूसरी पीढ़ी में (2) उशनस (शुक्र) पांचवी पीढ़ी में (3) शंड, मर्क और अप्तवान छठी पीढ़ी में (4) उर्व तीसवीं पीढ़ी में (5) ऋचीक इकतीसवी पीढ़ी में (6) जमदग्नि और अजगर्ति बत्तीसवीं पीढ़ी में (7) राम और शुनः शेष चौतीसवीं पीढ़ी में (8) अग्नि और बीतहव्य चालीसवीं पीढ़ी में (9) वहयश्व बासठवीं पीढ़ी में (10) दिथोदास तिरसठवीं पीढ़ी में (11) मित्रयुव और परूच्छेपिदेवोदास चौसठवीं पीढ़ी में (12) मैत्रयुव, प्रवर्दन, देवोदास और प्रचेत्स पैंसठवीं पीढ़ी में (13) अनीर्ति पालच्छेपि और वाल्मीकि छासठवीं पीढ़ी में (14) सुमित्र वाहयश्व सड़सठवीं पीढ़ी में (15) देवापि शौनक इकहत्तरवीं पीढ़ी में (16) इन्द्रोत देवापि शौनक बहत्तरवीं पीढ़ी में (17) वैशम्पायन चौरनवीं पीढ़ी में च्यवन वंशी चड़ भार्गव महाराज जनमेजय पांडव के समकालीन थे। (16 शताब्दी दूसर भार्गव) स्कन्द पुराण ने भौगोलिक आधार पर ब्राह्मणों की 10 जातियां बताई हैं, जिनमें 5 विन्ध्य पर्वत के उत्तर की हैं, और 5 दक्षिण की 1 उत्तर भारत की 5 जातियां सारस्वत, गौड़, कान्यकुब्ज, मैथिल और उत्कल हैं। कुरु अथवा गुड़ प्रदेश आर्य सभ्यता का केन्द्र माना जाता था। अतः उसके नाम पर ये सभी ब्राह्मण सामान्य रूप से पंच गौड़ कहलाये दक्षिण के प्रदेशों के ब्राह्मण सामान्य रूप से पंच द्रविड़ कहलाये। इसी प्रकार भार्गव गोत्री गौड़ ब्राह्मणों का एक समूह कुंडिया कहलाता है तो दूसरा धूसर, ढसिया अथवा ढोसीवाला कहलाता है। आदि गौड़ ब्राह्मणोत्पत्ति में उल्लिखित धूसर, ढसिया अथवा ढोसीवाला ही आधुनिक दूसर भार्गव हैं। दूसर भार्गवों का एक पृथक समुदाय के रूप में सर्वप्रथम 16 श. में मुगल सम्राट अकबर के समय में मिलता है। ये गौड़ ब्राह्मणों से पृथक थे। 16 श. से पहले भी दूसर भार्गवों का उल्लेख मिलने की विपुल सम्भावना है। हरियाणा के नारनौल ग्राम के पास स्थित ढोसी नामक ग्राम के पास भार्गवों के आदि पूर्वज महर्षि च्यवन का आश्रम था। इसी ढोसी के निवासी भार्गव दूसर कहलाये। इसका पृष्ठ प्रमाण 18 शण् के उत्तरार्द्ध में रचित गुरु भक्ति प्रकाश नामक ग्रन्थ से मिलता है। भौगोलिक क्षेत्र की दृष्टि से बधुसरा नदी के किनारे रहने के कारण ही च्यवन के वंशज वधूसर कहलाये इसी वधूसर शब्द का विलुप्त होकर धूसर शब्द बना। शनैः-शनैः धूसर शब्द के ध के स्थान में ढ आ जाने दूसर शब्द इसी प्रकार बन गया जिस प्रकार धृष्ट शब्द से ढीट बन गया। ढोसी ग्राम का नाम भी वधूसरी का ही अपभ्रंश है। च्यवन और उनके वंशज वधूसरा नदी के तट पर रहते थे, तो सभी भृगुवंशी ब्राह्मण कहलाने चाहिए। उत्तर मध्यकाल तक भी वधूसरा नदी के आस-पास के ही प्रदेश में बसे रहे उनकी संज्ञा वधूसर अथवा धूसर हो गयी। दूसर भार्गव एक पृथक जाति के रूप में संगठित हो गये तब कम संख्या होने के कारण गोत्र प्रवर के नियमों का पालन करना कठिन हो गया। 16वीं शताब्दी में एक नाम (भार्गव) हेमू का आता है। महाराज हेमचन्द्र विक्रमादित्य वह विद्युत की भांति चमके और देदीप्यमान हुए। हेमू दूसर भार्गव वंश के गोलिश गोत्र में उत्पन्न राय जयपाल के पौत्र और पूरनमाल के पुत्र थे। हेमू 16वीं शताब्दी का सबसे अधिक विलक्षण सेनानायक था। शुक्ल पक्ष में विजयदशमी सन् 1501, विक्रमी संवत् 1558, को मेवात में राजगढ़ के पास माछेरी कस्बे के सम्पन्न दूसर (भार्गव) ब्राह्मण परिवार में हुआ था। आपका गोत्र गोलिश व कुलदेवी शकरा थी। आपके पिता संत पूरनदास एवं रेवाड़ी के संत नवलदास (दूसर) राधाबल्लभ सम्प्रदाय (वृंदावन) के प्रवर्तक हित हरिवंशराय के प्रमुख शिष्यों में से थे। हेमू का परिवार माछेरी से कुतुबपुर, रेवाड़ी में आकर बसा। आज भी आपकी हवेली जीर्ण-शीर्ण अवस्था में कुतुबपुर में स्थित है। उस समय रेवाड़ी एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र था जो दिल्ली से ईरान तथा ईराक के रास्ते में पड़ता था। सम्राट हेमचन्द्र विक्रमादित्य का राज्याभिषेक 7 अक्टूबर 1556 को दिल्ली के पुराने किले में हुआ था आपने मिर्जा तादीबेग के नेतृत्व में सिम्मलित हुयी विदेशी मुगल सेना को हराकर दिल्ली पर अधिकार जमाया था। वास्तव में पृथ्वीराज चौहान के जीवन काल के प्रायः 300 वर्षों बाद आप भारत के एकमात्र हिन्दू सम्राट थे जिसे इतिहास का भूला हुआ एक पृष्ठ कहा जाता है। इतिहास प्रसिद्ध शेरशाह सूरी की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र इस्लाम खान ने राजगद्दी संभाली। उन्होंने हेमू की प्रशासकीय क्षमताओं का भरपूर उपयोग किया। हेमू ने सम्राट हेमचन्द्र के रूप में भारतीय राजनीति में नया सूत्रपात किया- उसने अपने भाई जुझार राय को अजमेर का सूबेदार गवर्नर बनाया एवं अपने भान्जे रमैया (रामचन्द्र राय) और भतीजे महीपाल राय को सेना में शामिल कर लिया। हेमू ने किसी भी अफगान अधिकारी को उसके पद से नहीं हटाया इससे भी सैनिकों में उसके प्रति विश्वास बढ़ा। हेमू ने अपने अल्प शासन काल में जिस जातिगत सौहार्द और धार्मिक सहिष्णुता का सूत्रपात किया, वह उसकी अपूर्व दूर-दृष्टि का

परिचायक है। अकबर की आयु उस समय केवल 13 वर्ष थी और बैराम खाँ उसका संरक्षक और प्रमुख सलाहकार था। तर्दी बेग के नेतृत्व में मुगल सेना की दिल्ली में हार और हेमू की विजय से बैराम खाँ इतना अधिक आहत और विचलित था कि उसने अकबर की सहमति के बगैर तर्दी बेग को फाँसी दे दी। 5 नवम्बर 1556 को पानीपत में सम्राट हेमचन्द्र व अकबर की सेना में भयंकर युद्ध हुआ। एक तीर सम्राट हेमचन्द्र की आँख को छेदता हुआ सिर तक चला गया। हेमचन्द्र ने हिम्मत न हारते हुए तीर को बाहर निकाला परन्तु इस प्रयास में पूरी की पूरी आँख तीर के साथ बाहर आ गई। आपने अपने रूमाल को आँख पर लगाकर कुछ देर लड़ाई का संचालन किया, परन्तु शीघ्र ही बेहोश होकर अपने हवाई नामक हाथी के हौदे में गिर पड़े। आपका महावत आपको युद्ध के मैदान से बाहर निकाल रहा था कि मुगल सेनापति अली कुली खान हवाई हाथी को पकड़ने के लिए आगे बढ़ा और बेहोश हेमू को गिरफ्तार करने में कामयाब हो गया। इस प्रकार दुर्भाग्यवश सम्राट हेमचन्द्र एक जीता हुआ युद्ध हार गये और भारत के अंतिम हिन्दू सम्राट हेमचन्द्र दूसर (भार्गव) वंश का शासन 29 दिन के बाद समाप्त हो गया। बैराम खाँ के लिए यह घटना एकदम अप्रत्याशित थी। बैराम खाँ ने अकबर से प्रार्थना की कि हेमू का वध करके वह गाजी की पदवी का हकदार बने। आनन-फानन में अचेत हेमू का सिर धड़ से अलग कर दिया। जिससे हेमू के समर्थकों की हिम्मत या भविष्य के विद्रोह की संभावना को पूरी तरह कुचल दिया जाय। दिल्ली पर अधिकार हो जाने के बाद बैराम खाँ ने हेमू के सभी वंशधरों का क़त्लेआम करने का निश्चय किया। हेमू के समर्थक अफ़ग़ान अमीर और सामन्त या तो मारे गए या फिर दूर-दराज़ के ठिकानों की तरफ भाग गए। बैराम खाँ के निर्देश पर उसके सिपहसालार मौलाना पीर मोहम्मद खाँ ने हेमू के पिता को बंदी बना लिया और तलवार के वार से उनके वृद्ध शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। और उसने हेमू के समस्त वंशधरों यानी सम्पूर्ण दूसर भार्गव कुल को नष्ट करने का निश्चय किया। अलवर, रिवाड़ी नारनौल, आनौड़ आदि क्षेत्रों में बसे हुए दूसर कहलाए जाने वाले भार्गव जनों को चुन-चुन कर बंदी बनाया। साथ ही हेमू के अत्यन्त विश्वास पात्र अफ़ग़ान अधिकारियों और सेवकों को भी नहीं बक्शा। अपनी फ़तह के जश्न में उसने सभी बंदी दूसर भार्गवों और सैनिकों के कटे हुए सिरों से एक विशाल मीनार बनवाई। (इस मीनार की मुगल पेन्टिंग राष्ट्रीय संग्रहालय में मौजूद है।) अकबर ने एक फ़रमान के ज़रिये जब अपना रोष प्रकट किया तो बैराम खाँ ने अकबर के खिलाफ़ बगावत कर दी। अकबर ने उसे हराकर बंदी बना लिया और उसे क्षमादान दे दिया। बैराम खाँ ने अपने पापों का प्रायश्चित्त करने हज के लिए मक्का भेजे जाने की दरखास्त पेश की जिसे अकबर ने मंजूर कर लिया। लेकिन रास्ते में मुबारक खाँ लोहानी नामक अफ़ग़ान ने तलवार से प्रहार कर उसे मार डाला। अकबर के गुप्तचरों ने सम्राट को सूचना दी कि भार्गव सम्प्रदाय की औरतों और छोटे बच्चों को छोड़कर, पूरी तरह सफ़ाया कर दिया गया है, केवल एक दूसर भार्गव शेष रह गया है उनका नाम है संत नवलदास। अकबर के आदेश के अनुसार संत नवलदास को पकड़कर दरबार में हाज़िर किया गया और उन्हें कारागार में डाल दिया गया। संत नवलदास से भेंट के बाद अकबर का हृदय परिवर्तन हुआ। उसने दूसर भार्गवों पर बरसों से हो रहे अत्याचारों को तुरन्त बंद करने का आदेश दिया और हेमचन्द्र के मृत भतीजे महीपाल के चार वर्षीय पुत्र नथमल को हेमचन्द्र का एकमात्र वंशज समझकर अनौड़ के विशाल क्षेत्र की जागीर सौंपी और राजकोष से 11 हजार मुद्राएं वार्षिक रूप से देने का शाही फ़रमान जारी किया, जो सन्-1857 तक मान्य रहा। प्राप्त ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार यह निष्कर्ष निकालना पूर्णतः युक्तसंगत है कि भारतीय राजनीति में हिन्दू मुस्लिम एकता अथवा सर्वधर्म सम्भाव के प्रणेता अकबर नहीं, (जैसा कि अनेक विदेशी एवं भारतीय इतिहासकारों का मत है) बल्कि हेमचन्द्र थे, जिनकी सेना में 90 प्रतिशत से अधिक अफ़ग़ान मुसलमान थे। दिलचस्प तथ्य यह है कि हेमचन्द्र को सम्राटत्व उनके सहयोगी अफ़ग़ान सेनाधिकारियों एवं प्रशासकों ने एकमत से दिया था। ‘‘विक्रमादित्य’’ की उपाधि भी उन्हें प्रदान की गई थी, उन्होंने स्वयं धारण नहीं की। गौरतलब यह भी है कि बिहार के अनेक क्षेत्रों में हेमचन्द्र से सम्बन्धित लोकगीत आज तक प्रचलन में हैं। यह तथ्य इस बात को रेखांकित करता है कि हेमचन्द्र सामान्य जनों के बीच अत्यन्त लोकप्रिय थे और जिस ‘‘जन कल्याण राज्य’’ (Social Welfare State) की आज चर्चा की जाती है, मध्यकालीन भारत में उसके प्रणेता हेमचन्द्र विक्रमादित्य थे। औरंगजेब के अन्याय से प्रताड़ित हिन्दुओं की रक्षा के लिए छत्रपति शिवाजी, गुरुगोविन्द सिंह और स्वामी चरणदास जैसे महान पुरुषों ने जन्म लिया। महात्मा चरणदास ने भाद्रपद शुक्ल तृतीया संवत्- 1760 तदनुसार सन्- 1703 ई को जन्म लिया। सन्त चरणदास का व्यक्तित्व इतना चमत्कारी था कि उस समय के अनेक शासक भी उनसे प्रभावित हो गये। सन्त चरणदास आध्यात्मिक ज्ञान और योग में ही निष्णात नहीं थे वरन् एक श्रेष्ठ कवि भी थे। उनकी फुटकर रचनाशब्द नाम से विख्यात हैं। इनकी आख्यानान्तर और वर्णनात्मक रचनाएं प्रायः श्री कृष्ण लीला से सम्बंध रखती हैं। चरणदास जी बहुत बड़े योगी ही नहीं थे, उतने ही बड़े सुधारक भी थे। धर्म और समाज

के क्षेत्रों में फैले हुए अन्धविश्वासों, आडम्बरों और संकीर्णताओं को दूर करने का उन्होंने सतत् प्रयत्न किया। ये एकेश्वरवादी थे। चरणदास जी ने समाज में ही नहीं धर्म के क्षेत्र में भी नारी को पुरुष के बराबर ला बिठाया। उनकी शिष्य मंडली में सबसे प्रमुख दो शिवयायें हैं, जिनके नाम सहजोबाई और दया बाई थे। सहजोबाई एक उच्चकोटि की हरि भक्त थीं और उन्हें 18वीं शताब्दी की मीराबाई कह सकते हैं। इनकी दूसरी शिष्या दयाबाई थीं। ये भी सहजोबाई के समान कवियित्री थीं और उन्होंने सन्- 1761 में दयाबोध नामक ग्रन्थ की रचना की और दूसरा ग्रन्थ 'विनय-मालिका' है। दयाबाई का 1773 ई.में निर्वान हुआ। इस प्रकार 18वीं शताब्दी की इन विभूतियों ने हिन्दू समाज को सन्मार्ग दिखाने का अत्यन्त सराहनीय कार्य करके भृगुवंश को गौरव प्रदान किया। भृगुवंश से शुरू हुआ भार्गवों का इतिहास जिसमें अनेक विभूतियों ने जन्म लिये, जिसके पूर्वजों ने हिन्दुस्तान की बाग डोर संभाली और जो इतना पुराना होते हुये भी इनकी संख्या कम होने की एक वजह क्या रही ये चिंतन का विषय है। सम्पूर्ण भारत में लगभग 7000 भार्गव परिवार है। व्यक्ति, राष्ट्र की इकाई और उसका चरित्र राष्ट्र चरित्र का परिचायक होता है। भार्गव वंश के मनीषियों के उच्च चरित्रों एवं उपलब्धियों ने भार्गव जाति को देश विदेशों में गौरवपूर्ण स्थान दिलाया है अतः यह आवश्यक हो जाता है कि उनके द्वारा राष्ट्र एवं समाज के प्रति की गई सेवाओं का लेखा जोखा लिपिबद्ध किया जावे यह इसलिए भी आवश्यकत था कि नवीन पीढ़ी इन गौरवपूर्ण गाथाओं से प्रेरणा प्राप्त कर अपने चरित्र निर्माण की एवं राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की भावना को अपने जीवन में साकार करे।

साभार - भार्गव जाति का इतिहास